International Journal of Research
Special Issue for UGC Approved Journal-Hindi Papers
Available at https://edupediapublications.org/journals
e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

नालन्दा : प्राचीन भारतीय विद्या का केन्द्र

उमेश कुमार
इतिहास प्राध्यापक
रा0व0मा0वि0 जसराना सोनीपत

शोध सार :—प्राचीन भारत में शिक्षा ज्ञान प्राप्ति का सबसे बडा स्रोत माना जाता था । व्यक्ति के जीवन को सुंतुलित औरर श्रेष्ठ बनाने तथा एक नई दिशा प्रदान करने में शिक्षा का महत्वपूर्ण योगदान था । सामाजिक बुराईयों को उसकी जडों से निर्मूल करने तथा त्रुटिपूर्ण जीवन में सुधार करने के लिए शिक्षा की नितान्त आवश्यकता थी । प्राचीन भारत में शिक्षा प्रदान गुरू के आश्रम में रहकर प्राप्त की जाती थी । समय के साथ इन गुरूकुलों ने संस्थाओं का रूप धारण कर लिया और ये शिक्षा प्रदान करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने लगे । इसी कडी में शिक्षा प्रदान करने का एक महत्वपूर्ण केन्द्र था नालन्दा । जहां पर शिक्षा प्राप्त करने के लिए भारत से ही नहीं अपितु विदेशों से भी विद्यार्थी शिक्षा ग्रहण करने आते थे ।

प्रस्तावना:—प्राचीनकाल के उत्तरार्द्ध में नालन्दा विश्वविद्यालय बहुत अधिक प्रसिद्धि प्राप्त कर चुका था । इस विश्वविद्यालय में बौद्ध धर्म और दर्शन की शिक्षा के अलावा अन्य कई विषयों की शिक्षा भी दी जाती थी [1]। विभिन्न साहित्यिक व पुरातात्वि स्रोतों से पता चलता है कि इस शिक्षण केन्द्र की ख्याति महात्मा बुद्ध के समय से आरम्भ हुई । महात्मा बुद्ध ने इस विश्वविद्याय के आम्रवन में काफी समय व्यतीत किया और अपने शिष्यों को धर्म दर्शन की शि़क्षा प्रदान की । बुद्ध के प्रमुख शिष्य सारिपुम की यह जन्मस्थली भी था । 500 श्रेष्ठीयों ने मिलकर 10 करोड मुद्राओं से नालन्दा क्षेत्र का क्रय करके महात्मा बुद्ध को अर्पित किया था ।

प्राचीन बौद्ध स्थल नालन्दा के भग्नावेशेष नालन्दा जिले में बडगांव नामक ग्राम के निकट स्थित है जो वर्तमान बिहार की राजधानी पटना से 50 मील की दूरी पर स्थित है । सडक मार्ग द्वारा यह राजगीर,बिहार शरीफ व पटना से भली—भांति जुडा हुआ है । ऐसा

प्रतीत होता है कि यह स्थान अपने आरम्भिक काल में ब्राहमण शिक्षण का केन्द्र होते हुए भी बौद्ध धर्म और शिक्षा का प्रचार स्थान रहा । इसकी ख्याति तब और बढ गई जब बौद्ध विद्वान दिडनाग ने ब्राहमण द्विान सुदुर्गम को शास्त्रार्थ में परास्त किया था । गुप्त राजाओं के प्रोत्साहन और सहयोग से अल्पसमय में ही इसकी प्रतिष्ठा स्थापित हो गई । सबसे पहले कुमारगुप्त ने इस बौद्ध संघ को दान दिया था । कुमारगुप्त प्रथम ने ही यहां पर एक वृहद विहार का निर्माण करवाया था । इसके बाद गुप्त शासकों बुद्धगुप्त, तथागत गुप्त, नरसिंहगुप्त, बालादित्य आदि ने अपना संरक्षण प्रदान करके इसके विकास में योगदान दिया । दीर्घकाल तक यहां का विशाल मंदिर ही संघ का मुख्य उपासनाा गृह बना रहा ।

श्वानच्वांग के विवरण से विदित होता हे कि यहां पर अनेकानेक विहारों का निर्माण किया गया था । खुदाइयों से पता चलता है कि नालन्दा विश्वविद्यालय कम से कम 1 मील लम्बा और 1/2 मील चौडा था । पूर्वनिश्चित योजनानुसार ही विहार और तत्सम्बन्ध स्तूपों का निर्माण हुआ था । इनका निर्माण एक पंक्ति में निश्चित दूरी पर हुआ था, मनमाने ढंग पर नहीं [2]। यहां का सबसे बडा विहार 203 फीट लम्बा और 164 फीट चौडा था । सामान्यतः इसके कक्ष 9 फीट से 12 फीट तक लम्बे थे । यशोवर्मन के एक अभिलेख से पता चलता है कि नालन्दा के विहारों की शिखर श्रेणियां गगनस्थ मेघों का चुम्बन करती थी । इनमें अनेक जलाशय थे जिनमें अनेक कमल तैरते रहते थे । खुदाई से पता चलता है कि यहां 7 विश्वविद्यालय अर्थात् विशालकाय कक्ष और 300 छोटे बडे कक्ष बने हुए थे । यहां पर छात्रों के रहने के लिए छात्रावास भी बने हुए थे जिनके प्रत्येक कोनों पर कूपों का निर्माण किया गया था जिसकी पुष्टि उत्खनन से मिले प्रमाणों से होती है । ज्यादातर विहार दो मंजिलों के बने हुए थे । प्रत्येक विद्यार्थी को शमन हेतु पत्थर की एक चौकी, दीपक रखने के लिए ताखे बने होते थे । उत्खनन से प्राप्त कुएं से समुचित जल प्रबन्ध की बात का पता चलता है । विश्वविद्यालय के खर्चे के लिए 200 गांव दान में प्राप्त थे जिनकी आय से अध्येताओं तथा शिक्षकों का भरण–पोषण होता था । हर धर्म, हर अध्यापक, में सब हमें यह बताने में लगे थे कि हम क्या करें, क्या सोचें, क्या आशाएं रखें [3]। इस संस्था में प्रवेश पाने के इच्छुक

विद्यार्थियों के लिए कडे नियम थे । उनके लिए जटिल तार्किक प्रवेश प्रक्रिया का नियोजन किया जाता था जो हर प्रकार से विद्यार्थी को रचनात्मक बनाने में सहयोग करते थे । सबसे पहले छात्रों को द्वारपाल से वाद–विवाद करना पडता था तथा उनकी शंकाओं का समाधान भी करना पडता था । प्रवेश की पहली परीक्षा में ही ज्यादातर विद्यार्थी अनुत्तीर्ण हो जाते थे । विभिन्न विषयों के अनेक विद्वान यहां उपस्थित थे । ये विद्वान अपने विषय के अध्ययन–अध्यापन से ही संतुष्ट नहीं रहते थे अपितु अनेक उपयोगी ग्रन्थों की रचना भी करते थे । नागार्जन, धर्मपाल, शीलभद्र, हवेनसांग और स्थिमति आदि अनेकानेक विद्वानों का सम्पर्क इसी प्रबुद्ध परम्परा से रहा है ।

इत्सिंग के समय यहां विद्यार्थियों की संख्या 3000 थी जो कालान्तर में हवेनसांग के समय बढकर 10000 हो गई थी । यहां शिक्षकों की संख्या लगभग 1510 थी जिनमें 1010 सूत्र निकायों में दक्ष थे और अन्य 500 अन्य विषयों मे दक्ष थे । हवेनसांग के समय में यहां के कुलपति शीलभद्र थे जो अनेक विषयों के ज्ञाताा थे । देश–विदेश से ज्ञान प्राप्त करने हेतू यहां विद्यार्थी आते थे । नालन्दा के पथ से आकृष्ट होकर आने वाले विदेशी विद्यार्थियों में मुख्यतः चीन,कोरिया, तिब्बत एवं तुखार आदि से सम्बन्ध रखते थे । ये सभी इस विश्वविद्यालय में रहकर न केवल शिक्षा प्राप्त करते थे बल्कि पाण्डुलिपियों की प्रतिलिपियां भी तैयार करते थे । ज्येष्ठ और कनिष्ठ विद्यार्थियों के मध्य परस्पर एक दूसरे की सहायता करने का उल्लेख मिलता है । न्याय वैशेषिक, सांख्य, योग मामांसा, वेदांत, षडदर्शन से संबंधित तमाम दार्शनिक ग्रन्थ तथा पुस्तकें जो संस्कृत में थी, इन पुस्तकालयों में उपलब्ध थी [4]। तीन भवनों से मिलकर नालन्दा के पुस्तकालय का निर्माण हुआ था जिन्हें क्रमशः रत्नसागर, रत्नरंजक तथा रत्नोदधि की संज्ञा से संबोधित किया जाता था । यहां की शैक्षिक महत्ता इस तथ्य से भी प्रमाणित होती है कि जो शिक्षार्थी यहां के नहीं रहते थे वे भी अपना महत्व स्थापित करने के लिए नालन्दा के विद्यार्थी होने का मिथ्या दावा पेश करते थे ताकि तत्कालीन समाज उन्हें आदर और सम्मान प्रदान करे । इत्सिंग ने स्वयं अपने वर्णन में लिखा है कि

"मुझे इस बात से अत्याधिक प्रसन्नता है कि जो ज्ञान हमें यहां प्राप्त करने का अवसर मिला, वह अन्यत्र संभव नहीं था ।"

नालन्दा विश्वविद्यालय यद्यपि हीनयान व महायान दोनों सम्प्रदायों से संबंधित था परन्तु इस विश्वविद्यालय में महायान सम्प्रदाय शाखा की प्रधानता थी । यहां पर पालि भाषा की शिक्षा अनिवार्य रूप से दी जाती थी । हवेनसांग ऐसे कई आचार्यों का उल्लेख करता है जिनकी विद्वत्ता दूर–दूर तक फैली हुई थी । इनकी विद्वता से प्रभावित होकर विद्यार्थी इस विश्वविद्यालय की ओर आकर्षित होते थे । धर्मपाल, चन्द्रपाल, गुणमति, प्रभामित्र, जिनमिम, आर्यदेव, ज्ञानचन्द्र आदि का वर्णन हवेनसांग करता है ।

इस विश्वविद्यालय में सरल से कठिन एवं 'स्थूल से सूक्ष्म की ओर' इस मनोविज्ञान के शिक्षण सिद्धान्त के अनुसार स्वच्छता व्यवस्थाप्रियता, समयशीलता, अनुशासनपालन, शिष्टाचार, परस्पर सहयोग एवं उत्तरदायित्व की भावना आदि स्थूल एवं सरल गुणों का विकास सहपाठ्य क्रियाकलापों के माध्यम से प्रारम्भ किया जाना चाहिए [5]। उपर्युक्त मत से यह अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि नालन्दा की पाठ्यचर्चा एवं दिनचर्या अनुकरणीय एवं आदर्श थी । नालन्दा से जुडी सभी प्रकार की व्यवस्था का प्रधान नियामक भिक्षु महास्थावर होता था जो कोई प्रसिद्ध या कीर्तिमान भिक्षु होता था । संघ के सभी सदस्य मिलकर उस भिक्षु का निर्वाचन करते थे । निर्वाचन का मूलाधार चरित्र, प्रतिभा, विद्वता आदि योग्यताएं होती थी । प्रबंध एवं समितियां सहायक के तौर पर होती थी । शिक्षा समिति का कार्य दायित्व शिक्षण संबंधी कार्यों से होता था तथा प्रबंधन समिति आधारभूत आवश्यकताओं हेतू होती थी ।

गुप्तकाल से लेकर भारत में मुसलमानों के आक्रमण तक यह विद्या का केन्द्र प्रगति करता रहा । 9वीं शताब्दी में जावा, सुमात्रा के शासक बालदेव ने भी यहां पर एक विहार का निर्माण करवाया तथा उसके वार्षिक खर्च हेतू बंगाल नरेश देवपाल (जो उसका परम मित्र था) 5 गांव दान में देने के लिए प्रेरित किया था । तिब्बती विद्वान तारानाथ ने लिखा है कि विक्रमशीला के आचार्यों को पाल शासकों द्वारा यहां का परीक्षक नियुक्त किया गया था [6]।

e-ISSN: 2348-6848
p-ISSN: 2348-795X
Volume 05 Issue 02
January 2018

अन्य तिब्बती सूत्रों से पता चलता है कि बौद्धों में तंत्र विद्या का अधिक प्रसार हो जाने के कारण यहां का अध्ययन एवं विमर्श बाधित हुआ जो कालान्तर में इसकी अवनति का कारण बना । 12वीं शताब्दी के अंत में मुस्लिम आक्रान्ता बख्तियार खिलजी के विध्वंसक आक्रमणों ने उची इमारतों का खण्डहर बना दिया तथा चिंतन की धरती को चिता की स्थली शमसान के रूप में परिवर्तित कर दिया । नालन्दा के शैक्षिक मूल्य आज भी वर्तमान शिक्षा व्यवस्था को मार्ग दिखाते हुए परिलक्षित होते हैं ।

संदर्भ :–

1. जयशंकर प्रसाद : प्राचीन भारत का सामाजिक इतिहास, पृ0– 540
2. ए0एस0अल्तेकर : प्राचीन भारतीय शिक्षण पद्धति, पृ0– 87
3. जे. कृष्णमूर्ति : शिक्षा क्या है, पृ0– 188
4. रामशुक्ल पाण्डेय : प्राचीन भारत में शिक्षा मनीषी, पृ0– 115
5. लज्जाराम तोमर : भारतीय शिक्षा के मूल तत्व, पृ0–109
6. बसु कृत इण्डियन टीचर्स ऑफ बुद्धिस्ट यूनिवर्सिटीज, पृ0– 36